भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक एवं धार्मिक पृष्ठभूमि

अमर कांत*

उन्नीसवीं शताब्दी ने भारत के इतिहास में एक नवीन युग का सूत्रपात किया। पाश्चात्य शिक्षा के प्रसार तथा विदेशी सभ्यता तथा संस्कृति के सम्पर्क में आने से भारतीयों में एक नवीन भावना तथा चेतना का उदय हुआ। यह कोई आकस्मिक घटना न थी, वरन् अनेक कारणों का परिणाम था। भारत में 1857 ई० की क्रान्ति हो चुकी थी। इस क्रान्ति के सम्बन्ध में विचारकों में जो कुछ भी मतभेद हों, परन्तु कुछ अंशों में यह अवश्य एक व्यापक आर्थिक तथा राजनीतिक असनतोष की अभिव्यक्ति थी। प्रारम्भ में चाहे यह सिपाहियों का एक विद्रोह मात्र रहा हो, परन्तु भविष्य में इसने एक सर्वतोमुखी व्यापक क्रान्ति को जन्म दिया। इसी काल में अनेक सामाजिक तथा धार्मिक आन्दोलनों का सूत्रपात हुआ। इन आन्दोलनों के कारण जो सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक पुनर्जागृति हुई, उन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन की उत्पत्ति के लिए जमीन तैयार की। 'जब लम्बी दासता से बंजर हुई भारत की भूमि को सशस्त्र क्रान्ति के विशाल हल ने खोदकर तैयार कर दिया और जब सुधारकों के दल ने उसमें मानसिक स्वाधीनता के बीज बो दिये, तब यह सम्भव हो गया कि उसमें से राजनीतिक स्वाधीनता के अंकुर उत्पन्न हों। यह सर्वसम्मत सिद्धान्त है कि मानसिक स्वाधीनता के बिना सामाजिक स्वाधीनता तथा सामाजिक स्वाधीनता के बिना राजनीतिक स्वाधीनता असम्भव है। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में देश के पूर्व और पश्चिम, उत्तर और दक्षिण में राजनीतिक जागृति के चिह्न दिखाई देने लगे।'1 डॉ० जकारिया के अनुसार, भारत की पुनर्जागृति मुख्यतया आध्यात्मिक थी तथा एक राष्ट्रीय आन्दोलन का रूप धारण करने से पूर्व इसने अनेक सामाजिक एवं धार्मिक आन्दोलनों का सूत्रपात किया।2 इन्हीं सुधार–आन्दोलनों के कारण प्रगतिवादी विचारों को प्रेरणा मिली तथा भारतीयों में राष्ट्रीय आत्मसम्मान तथा उत्कट देशभक्ति की भावना उत्पन्न हुई। अँग्रेजों की नौकरशाही की मनोवृत्ति एवं कार्यों ने जनता के हृदयों में राष्ट्रीयता की लहर पनपायी। ब्रिटिश शासन ने समय–समय पर भारतीयों के हृदयों में उमड़ती चेतना का दमन करना चाहा, परन्तु वह जैसे–जैसे दबायी गयी, वह और भी अधिक

***एम.ए. (इतिहास), यू.जी.सी. नेट ग्राम–जानीपुर बाज़ार, पोस्ट–शोरमपुर, जिला–पटना (बिहार)**

भड़की। इसी समय यूरोप में भी राष्ट्रवाद की लहर फैल रही थी, जिसके फलस्वरूप जर्मनी तथा इटली का एकीकरण हो चुका था। टर्की से यूनान को तथा हॉलैण्ड से बेल्जियम को भी दासता के बन्धन से मुक्ति प्राप्त हो चुकी थी तथा पूर्व में एक छोटे से पड़ोसी देश जापान के एकाएक उत्कर्ष ने भी भारतीयों को प्रेरणा प्रदान की। इन अनेक कारणों के फलस्वरूप भारत में जो राष्ट्रीयता की भावना फैली, उसका मुख्य उद्देश्य भारतीयों की उन्नति ही था। पर क्योंकि भारतवर्ष उस समय ब्रिटिश शासन के अधीन था तथा परतन्त्रता उसकी प्रगति के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा थी, इसलिए भारतीय राष्ट्रीयता का मुख्य उद्देश्य विदेशी शासन से मुक्ति पाना बन गया।

उन्नीसवीं शताब्दी में हुए धार्मिक एवं सामाजिक आन्दोलनों ने भी भारतीयों के हृदय में पर्याप्त मात्रा में राष्ट्रीयता की भावना का विकास किया। शताब्दियों तक पराधीन रहने के कारण भारतवासी अपने सांस्कृतिक वैभव को भूल गये थे। भारत में अंग्रेजों के आने से ईसाई धर्म का प्रचार होने लगा। इसने भी हिन्दू धर्म के अस्तित्व को चुनौती दी। ऐसे समय कुछ महान् आत्माएँ हुईं, जिन्होंने हिन्दू धर्म तथा संस्कृति की रक्षा के हेतु प्रयत्न किये। उन्होंने भारतीयों को उनके प्राचीन गौरव से अवगत कराया तथा उनके हृदय में यह भावना भरी कि उनकी सभ्यता एवं संस्कृति किसी से कम नहीं थी तथा पाश्चात्य सभ्यता का अन्धानुकरण करना उनके लिए उचित न था। ऐनी बेसेण्ट ने कहा भारतीय संस्कृति एक विशाल वृक्ष है, जिसके पीछे शताब्दियों का इतिहास है। जवाहरलाल नेहरू ने भी भारत में राष्ट्रीय जागृति के कारणों का उल्लेख करते हुए कहा है, 'यह दो बातों का परिणाम थी – पश्चिम का अवलोकन तथा 'अपना और अपने भूतकाल का निरीक्षण।'3 डॉ० रघुवंशी ने भी कहा है कि राष्ट्रीय आन्दोलन काफी सीमा तक पुनरूत्थानवादी आन्दोलन था। राष्ट्रीयता पुरानी स्मृतियों एवं उपलब्धियों पर निर्भर करती है तथा जब साम्राज्यवादियों के दबाव से प्रताणित होकर भारत की राष्ट्रीय आत्मा अपने भूतकाल से प्रेरणा प्राप्त करने का प्रयत्न करने लगी। उन्नीसवीं शताब्दी के सामाजिक एवं धार्मिक आन्दोलन में भी भारतीय जनता को अपने प्राचीन गौरव का ज्ञान हुआ तथा भविष्य में प्रगति करने की सम्भवना भी प्रतीत हुई।4 इन धार्मिक सुधार–आन्दोलनों का राष्ट्रीय जागरण पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा।

ब्रह्म समाज – राजा राममोहन राय आधुनिक युग के प्रवर्त्तक थे। वह एक विद्वान व्यक्ति थे तथा दर्शन का उन्होंने विस्तृत अध्ययन किया था। जब उन्होंने देखा कि देश के नवयुवकों में अपनी सभ्यता के प्रति अविश्वास बढ़ता जा रहा है, जनता अन्ध ाविश्वासों तथा कुरीतियों से प्रभावित है तथा बंगाल में ईसाई धर्म का प्रचार अत्यन्त वेग से हो रहा है तो उन्होंने उसके विरूद्ध आन्दोलन शुरू कर दिया। उन्होंने सती–प्रथा का विरोध किया एवं अंग्रेजी शिक्षा का समर्थन किया। 1828 ई० में

उन्होंने 'ब्रह्म समाज' की स्थापना की, जिसके सिद्धान्तों में उन्होंने हिन्दू, इस्लाम तथा ईसाई तीनों धर्मों की अच्छी बातों का समावेश किया। 1833 ई० में राजा राममोहन राय की मृत्यु हो गयी तथा महर्षि देवेन्द्रनाथ तथा केशवचन्द्र सेन ने ब्रह्म समाज के कार्य को आगे बढ़ाया। कालान्तर में ब्रह्म समाज के दो पक्ष हो गये – आदि समाज एवं साधारण समाज। आदि समाज के नेता महर्षि देवेन्द्रनाथ थे। इसकी विचारधारा संकुचित तथा रूढ़िवादिता पर आश्रित थी। साधारण समाज सुधारवादी था। केशवचन्द्र सेन ने 1864 ई० में मद्रास में 'वेद समाज' तथा 1866 ई० में बम्बई में 'प्रार्थना समाज' की स्थापना की। राजा राममोहन राय राजनीति–सुधार भी चाहते थे। वह भारतवासियों के लिए उसी प्रकार की स्वतन्त्रता के पक्षपाती थे, जो अंग्रेजों को अपनी विधि–व्यवस्था के अन्तर्गत प्राप्त थी। ये पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने कार्यपालिका सम्बन्धी तथा न्याय सम्बन्धी कार्यों के विभाजन का प्रश्न उठाया। बंगाल में राजनीतिक क्षेत्र तथा सामाजिक क्षेत्रों में पुनर्जागरण का श्रेय राजा राममोहन राय को ही है। ऐनी बेसेण्ट का कहना है कि राजा राममोहन राय अग्नि और इस्पात की वह अद्वितीय शक्ति थे, जिन्होंने शौर्य और साहस से अकेले ही हिन्दू धर्म की अटूट कट्टरता से लोहा लिया तथा स्वतन्त्रता का बीज बोया, जो कालान्तर में विशाल वृक्ष का रूप ले लेता, जिसकी छाया में राष्ट्र के हित निहित थे।5

आर्य समाज – उन्नीसवीं शताब्दी का दूसरा मुख्य आन्दोलन 'आर्य समाज' की स्थापना थी, जिसके संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती थे। वह अंग्रेजी के ज्ञाता नहीं थे। उन्होंने अपने ग्रन्थों की रचना हिन्दी में की, जिससे अधिकांश भारतीय जनता उन्हें समझ सके। हिन्दू धर्म में जो बुराइयाँ व्याप्त थीं, उनका स्वामीजी ने प्रबल विरोध किया। जात–पाँत को वह अवैदिक मानते थे तथा उन्होंने अस्पृश्यता का विरोध किया। स्त्रियों को भी वह पुरूषों के भी समान अधिकार देने के पक्षपाती थे। उन्होंने बाल–विवाह, बहु–विवाह, वृद्ध–विवाह आदि का विरोध किया तथा विधवा–विवाह का समर्थन किया। 'सत्यार्थ–प्रकाश' उनकी अमर कृति है। उन्होंने वेदों का भी भाष्य किया। उनके उपदेशों से भारतीय जनता में स्वदेशी, स्वराज्य आदि भावनाओं का विकास हुआ। रोमां रोलां ने उन्हें 'इलियड' या 'गीता' का नायक कहा है, जो हर्क्युलिज के समान शक्तिवान थे, जिन्होंने हिन्दू कट्टरता पर घोर प्रहार किये और शंकराचार्य के बाद बुद्धिमता का ऐसा देवदूत कोई नहीं हुआ था।6 हेन्स कोहन का भी मत है कि यह यह धार्मिक एवं राष्ट्रीय पुनरूत्थान आन्दोलन था, जो भारतीयों एवं हिन्दू जाति में नवीन जीवन का संचार करना चाहता था।7 प्रारम्भ में ब्रिटिश सरकार आर्य समाज को एक क्रान्तिकारी आन्दोलन समझती थी जो ब्रिटिश प्रभुता के लिए घातक सिद्ध हो सकता था।8

रामकृष्ण मिशन (1836–1886 ई०) – रामकृष्ण परमहंस9 से भी भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को बहुत बल मिला। बाल्यकाल से ही उनकी रूचि आध्यात्म

की ओर थी। यद्यपि वह अधिक शिक्षित न थे, पर छोटी आयु से ही उनके भाषणों का प्रभाव जनता पर बहुत अच्छा पड़ता था। उनका विश्वास था कि ब्रह्म एक है तथा ईश्वर, अल्लाह, क्राइस्ट आदि एक ही ईश्वर के नाम हैं। वह सब धर्मों के लक्ष्य को समान मानते थे अर्थात् ईश्वर की प्राप्ति। उनके शिष्य स्वामी विवेकानन्द में भी उत्कृष्ट प्रतिभा, असाधारण वक्तृत्व–शक्ति एवं त्याग की भावना थी। स्वामी विवेकानन्द उदार भारतीय धर्म के निपुण व्याख्याता थे। 1893 ई० में शिकागो में 'विश्व–धर्म–सम्मेलन' का जो अधिवेशन हुआ था, उसमें हिन्दू धर्म की व्याख्या करते हुए भूमिका रूप से उन्होंने जो वाक्य कहे थे, वह उनकी सम्पूर्ण विचारधारा के परिचायक हैं। आपने कहा था –

'मुझे उस धर्म का अनुयायी होने का अभिमान है, जिसने संसार को सहिष्णुता और विश्व–प्रेम की शिक्षा दी है। हम केवल विश्वव्यापिनी सहिष्णुता में ही विश्वास नहीं रखते, हम यह भी मानते हैं कि सब धर्म सच्चे हैं। मुझे उस जाति में उत्पन्न होने का अभिमान है, जिसने अत्याचार पीड़ितों को, मतवादियों द्वारा सताये हुए लोगों और पृथ्वी की सब जातियों को आश्रय दिया है।... मैं आपके सामने एक मंत्र की कुछ पंक्तियाँ उद्धत करता रहा हूँ और जिसका मेरे देश के करोड़ों आदमी प्रतिदिन पाठ करते हैं –

नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णवइव।

'जैसे सब नदियाँ भिन्न–भिन्न मार्गों से चलकर एक समुद्र में ही मिल जाती हैं, इसी प्रकार हे प्रभु, सब भिन्न–भिन्न नामों और उपायों से उपासना करने वाले मनुष्यों का अन्तिम लक्ष्य तू ही है।'10 उनका लक्ष्य था कि नैतिक आध्यात्मिक प्रभाव से भारत को अपना खोया हुआ स्थान पुनः प्राप्त कर जगत् की विजय करना चाहिए।11

उनमें उद्भट देशभक्ति तथा उन्नत धार्मिक भावना थी। उनके भाषणों ने न केवल संसार में भारतीय संस्कृति को उज्जवल किया वरन् देशवासियों के हृदय में आत्म–विश्वास तथा स्वधर्म तथा स्वदेश के लिए अभिमान उत्पन्न किया। उन्होंने अपने गुरू के नाम पर 'रामकृष्ण सेवाश्रम' की स्थापना की, जिसके अनेक केन्द्र है। यह सेवाश्रम अनेक प्रकार से मानव–जाति की सेवा कर रहा है।

थियोसोफिकल आन्दोलन – इस आन्दोलन ने भी भारत के नव–जागरण में काफी योगदान दिया। इसकी स्थापना 1875 ई० में एक रूसी महिला मैडम हेलना पेट्रोवना ब्लेवत्सकी तथा अमरीकी सैनिक अफसर हेनरी स्टील ऑलकाट ने अमरीका में की। इनका लक्ष्य धर्म को समाज–सेवा का मुख्य साधन बनाना था। चार वर्ष बाद भारत में भी अदयार में उन्होंने थियोसोफिकल सोसायटी की स्थापना की। इस सोसायटी ने सभी धर्मों का समर्थन किया तथा इसके नियमों के अनुसार धर्म ही वह तत्त्व था, जो राष्ट्रीयता को प्रेरित कर सकता था। 1893 ई० में ऐनी

बेसेण्ट ने भारत में आकर थियोसोफिकल आन्दोलन को बढ़ाया। वह राजनीतिक में भी भाग लेने लगीं। शिक्षा के प्रसार के लिए उन्होंने बनारस में हिन्दू कॉलेज की स्थापना की। इस आन्दोलन ने भी हिन्दुओं में नव–जागरण फैलाया तथा राष्ट्रीयता की भावना फैलायी।

बहावी एवं अन्य आन्दोलन – हमने हिन्दू धर्म के पुनरूत्थान से सम्बन्धित विभिन्न धार्मिक आन्दोलन की चर्चा की। परन्तु उस समय हिन्दू धर्म के अतिरिक्त इस्लाम एवं अन्य धर्मों में भी धर्म–सुधार आन्दोलन हुए। इनमें सबसे प्रमुख बहावी आन्दोलन था, जिसने इस्लाम में फैली कुरीतियों को दूर करने तथा इस्लाम की पवित्रता एवं इस्लाम की एकता पर जोर दिया। इसने कुरान पाक के अनुसार मुसलमानों को आचरण करने को कहा। रूढ़िवादी होने के कारण यद्यपि यह आन्दोलन सफल नहीं हो सका, लेकिन इसके समर्थक सर सैय्यद अहमद खाँ भी आर्य समाज एवं ब्रह्म समाज के समर्थकों की तरह पर्दा प्रथा, बहु विवाह, दास प्रथा आदि के कट्टर विरोधी थे। उन्होंने अलीगढ़ में एक कॉलेज की स्थापना कर मुस्लिम विश्वविद्यालय की नींव डाली। स्मरण रहे कि बहावी आन्दोलन हिन्दू–विरोधी आन्दोलन नहीं था। बहावी आन्दोलन के अतिरिक्त मुसलमानों द्वारा कई अन्य आन्दोलन भी चालू किये गये, जिसमें अहमदिया आन्दोलन प्रसिद्ध है। इस आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य मुसलमानों की सामाजिक, आर्थिक एवं बौद्धिक तरक्की करनी थी। इन विभिन्न आन्दोलन का प्रभाव बीसवीं सदी में देखने को मिला, जबकि मुसलमानों ने 'मुस्लिम लीग' नामक एक अलग साम्प्रदायिक राजनीतिक संगठन कायम किया।12

हिन्दू और मुस्लिम धर्म की भाँति सिक्ख धर्म में प्रविष्ट भ्रष्टाचार को दूर करने के लिए सिक्खों के शिरोमणि गुरू द्वारा प्रबन्ध–समिति की स्थापना की गयी। सिक्खों के बीच शिक्षा प्रचार के लिए जगह–जगह स्कूल और कॉलेज भी खोले गये। इसी प्रकार पारसी धर्म में सुधार लाने के लिये 1851 ई० में रहनुभाई मजदयसीनन नामक एक संगठन की स्थापना हुई। इस संस्था का मुख्य कार्य पारसी धर्म को पुनर्जीवित करना तथा समाज में सुधार लाना था।13 धर्म–सुधार के उद्देश्य से 1900 ई० में पारसियों का एक सम्मेलन भी हुआ।

यूरोपीय विद्वानों ने भी प्राचीन भारतीय साहित्य का अध्ययन करके पुरानी भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता की प्रशंसा की। इन विद्वानों में मैक्समूलर, मोनियर विलियम्स, रौथ, सैसून, बुनूफ़ आदि प्रसिद्ध हैं, जिन्होंने अनेक संस्कृत ग्रन्थों का भी अनुवाद किया। भारतीयों के ऊपर इन पाश्चात्य विद्वानों का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। उनमें अपने साहित्य तथा संस्कृति के प्रति अनुराग उत्पन्न हुआ। उन्हें यह ज्ञात हो गया कि उनकी सभ्यता तथा संस्कृति के सम्मुख यूरोपीय संस्कृति कुछ भी नहीं है। इस बात ने उनमें आत्म–सम्मान की वृद्धि की।

इस प्रकार उपर्युक्त धार्मिक आन्दोलनों ने, जो मूल रूप से धार्मिक थे, भारतवासियों में देशाभिमान तथा देश–भक्ति की भावनाओं का संचार किया। यही ध ार्मिक जागृति आगे आनेवाली राजनीतिक चेतना का मुख्य कारण बनी। सर वेलेण्टाइन शिरोल ने ठीक ही हिन्दू धर्म के पुनर्जागरण में भारतीयता की उत्पत्ति को देखा।14

इसी काल में अन्य सुधार–संस्थाएँ भी स्थापित हुई, जिन्होंने अपने–अपने क्षेत्र में नव–जागृति फैलायी। बम्बई में प्रार्थना समाज ने श्री महादेव गोविन्द रानाडे के नेतृत्व में समाज सुधार का काम किया। रानाडे ने विधवा–विवाह–प्रचार के लिए भी एक संस्था की स्थापना की तथा शिक्षा–प्रसार के लिए 'डेकन एजुकेशन सोसायटी' को जन्म दिया। उनके शिष्य श्री गोपाल कृष्ण गोखले ने 1905 ई० में 'सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी' की स्थापना की। इस संस्था के सदस्य सादा जीवन व्यतीत कर देश–सेवा करना अपना धर्म समझते थे।

इन सुधारवादी आन्दोलनों ने भारतीय समाज के पतन को रोककर उनकी मानसिक तथा आध्यात्मिक दुर्बलता को दूर कर दिया एवं भारतीयों में एक नई चेतना का संचार किया। इन आन्दोलनों ने एक ऐसी पृष्ठभूमि तैयार कर दी, जिस पर चलकर भारत में राष्ट्रवाद की भावना का विकास हुआ एवं स्वतंत्रता प्राप्त कर सका। श्री ए० आर० देसाई ने इन सुधार आन्दोलनों के सम्बन्ध में लिखा है कि, 'ये आन्दोलन कम, अधिक मात्रा में व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक समानता के लिए संघर्ष थे और इनका चरम लक्ष्य राष्ट्रवाद था।'15

सन्दर्भ सूची :–

1. इन्द्र विद्यावाचस्पति – भारतीय स्वाधीनता–संग्राम का इतिहास, पृ० 40
2. डॉ० जकारिया–रिनेसेण्ट इण्डिया, पृ० 15
3. पंडित जवाहरलाल नेहरू – डिस्कवरी ऑफ इण्डिया, पृ० 342
4. Raghuvanshi - Indian Nationlist Movement and Thought, pg. 5
5. ऐनी बेसेण्ट–इण्डिया एण्ड नेशन, पृ० 72–73
6. रोम्यां रोल–दयानन्द एण्ड इण्डियन प्रॉब्लेम, पृ० 228–29
7. Hans Kohn - History of Nationlism, pg. 62
8. रैम्जे मेकडॉनाल्ड & Awakening in India, pg. 35-36
9. Hans Kohn - History of Nationlism, pg. 71-72
10. इन्द्र विद्यावाचस्पति–भारतीय स्वाधीनता–संग्राम का इतिहास, पृ० 35
11. डॉ० विमलेश एवं भंडारी–भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास, पृ० 12
12. डॉ० राम नरेश त्रिवेदी–राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास, पृ० 20
13. वही, पृ० 21
14. Chirol - Indian Unrest, pg. 5
15. देसाई – भारतीय राष्ट्रवाद का सामाजिक पृष्ठभूमि, पृ० 210